P: ISSN No. 2231-0045 RNI No. UPBIL/2012/55438 VOL.-7, ISSUE-3, February-2019
E: ISSN No. 2349-9435 Periodic Research

सेवा सदनः सुमन तवायफ न होकर औरत हो जाती है

रामाश्रय सिंह
वरिष्ठ स0 प्रोफेसर,
हिन्दी विभाग,
महात्मा गांधी काशी विद्यापीठ,
वाराणसी

सारांश

'सेवा सदन' में नयी परम्परा कायम हुई है। यह परम्परा भारतेन्दु युग से आयी है। भारतेन्दु युग में जो निबन्धों, नाटकों, एवं अन्य विधाओं द्वारा लिखे गये, उसकी नींव यहीं रखी गई है। उसकी परिणित रूप मुंशी प्रेमचन्द्र में मिलती है। तो इसी समय स्वतंत्रता आन्दोलन के अगुआ गांधी जी भी थे। यही नहीं समाज में सुधार के आन्दोलन भी अपनी गति से आगे बढ़ रहा था। प्रेमचंद ने तत्कालीन समस्याओं को बखूबी उठाया। वे समाज के पतन का कारण स्त्रियों की उपेक्षा को मुख्य मानते थे। सेवा सदन उपन्यास की मूल नायिका सुमन है। सुमन की मजबूरियाँ नहीं हैं। बल्कि प्रेमचंद की गहरी निगाहें है। इस निगाह को देखकर शोध लेख का शीर्षक ''सुमन'' तवायफ न होकर औरत हो जाती है, रखा हूँ। यहाँ तवायफ और औरत को समझने की जरूरत है। सुमन के पिता दरोगा हैं। ईमानदारी में कोई शक नहीं है। रिश्वत लेने के कारण जेल में जाते हैं। तब दहेज के कारण शादी टूट जाती है। यहाँ ध्यान देने की जरूरत है कि प्रेमचंद सुमन को जो दिशा देते हैं उसे एक औरत की मनः स्थिति कहा जाय या समाज की मजबूरी ? सुमन की मुलाकात भोली बाई से होती है। जहाँ एक सामान्य औरत की जिन्दगी नहीं जीती है, बल्कि एशोआराम की जिन्दगी महसूस करती है। पति के क्रोध, और गरीबी से नहीं लड़ पाती है और कोठे की शिकार होती हैं। तब वह क्या है? तवायफ या औरत? पास रहकर भी कितनी दूरियाँ हाय रे मजबूरियाँ। फिर भी स्त्री के लिए आदमी ही उसका यथार्थ है। जबकि आदमी के लिए औरत एक भावनात्मक अनुभव है।

लेखक का कहना है कि सुमन का कोठे पर जाना वेश्या वृत्ति की समस्या नहीं है। इसके आलोक में प्रेमचंद स्त्री जाति को स्वालम्बी, महत्वाकांक्षी, साहसी, बनाते हुए पराधीनता की बेड़ी से मुक्ति दिलाना चाहते हैं। भारत में अंगेजी शासन के नौजवानों को कैसी शिक्षा दी जाती थी ? उसको भी ध्यान में रखकर कि– जो दहेज के लोभी थे ? विवाह और सतीत्व की दुहाई देकर लेनदेन करते थे। आज 2018 में सेवा सदन, 1918 के सेवा सदन में क्या फर्क हैं? ज्ञान विज्ञान एवं शिक्षा के प्रचार प्रसार में स्त्रियों की स्थिति काफी कुछ बदली तो जरूर दिखायी देती है, पर स्त्रियों की स्थिति वैसी ही नजर आ रही है। स्वयं प्रेमचंद ने कहा है– किस्सा खत्म, पैसा हजम, मेरा जीवन सपाट समतल मैदान है। जिनमें कहीं कहीं गढढ़े हैं पर टीले, पर्वतों घने जंगलों, गहरी घाटियों की और खंडहरों के स्थान नहीं हैं। जाहिर है कि उनकी माता नहीं रही, पिता भी नहीं रहे, सौतेली माता का व्यवहार ठीक नहीं रहा, अपने मन की कोमलता से उन्होंने दूसरों की कथा समझी। वानगी के तौर पर–दुनियां में स्त्री, न होती तो क्या होता? आदमी अपराध किसके साथ करता? अपने अपराधों की क्षमा किससे माँगता? दुःख के कठिन समय में किसकी थपकी से तसल्ली पाता? दुःखों की लड़ाई में किससे हिम्मत हासिल कर पाता? जवाब है– स्त्री के बगैर पुरूष जीवन मिलने का कोई अर्थ ही नहीं है। यानी स्त्री की जरूरत रहेगी। प्रेमचंद ने उस समय के लोगो को जो पूंजी और सुरासुन्दरी का मायावी जाल बिछाकर सत्ता और लोकतंत्र की चौथे स्तम्भ की आत्मा को सौदा करने की त्रासदी को उपन्यास में सुमन के माध्यम से कुशलता से दिखाने का प्रयास किया? हर स्त्री पति के मार्ग से अलग अपना मार्ग तय करेगी, तो राष्ट्र की सेवा कौन करेगा! कैसे करेगा!! तो भारत भूमि, महान आर्यवर्त महान राष्ट्र की परम्परा का क्या होगा? पति के अभीष्ट के लिए पत्नी अपना जीवन होम नहीं करेगी तो क्या करेगी। यहॉ तथ्य, तर्क, बुद्धि के महत्व को फिर से स्थापित करना है। आज के समय में बाढ़ में बहना नहीं तैरना है।

P: ISSN No. 2231-0045 RNI No. UPBIL/2012/55438 VOL.-7, ISSUE-3, February-2019
E: ISSN No. 2349-9435 Periodic Research

मुख्य शब्द : तवायफ, औरत सतीत्व, हजम, थपकी, वगैर, कठघरे, देहरी, तरजुमा, आरजुओं।

प्रस्तावना

सेवा सदन की शुरूआत ही–पश्चाताप के कड़वे फल कभी–कभी सभी को चखने पड़ते हैं और लोग बुराइयों पर पाश्चात्य कर है दरोगा कृष्णा चंद अपनी बुराइयों पर पश्चाताप कर रहे हैं। हिन्दी में पहली बार हाड़ मांस की स्त्री के रूप में चित्रण हुआ है वह अपने ऊपर लादे गये नैतिक मानों की श्रृंखलाओं को तोड़कर अपनी जिन्दगी जीती है। स्त्री देह धर्म को स्वीकारने का अभूतपूर्व साहस पहली बार उपन्यास में हुआ है। वह लोक लाज, कुलशील, सगे सम्बन्धी, और नैतिकता के लिए किसी छद्म को नहीं ओढ़ती। प्रेमचंद ने सामाजिक सम्बन्धों की छानबीन कितनी गहराई से की है यह इसी से जाहिर होता है कि उन्होंने वेश्यावृत्ति की मूल प्रेरक शक्तियों को कठघरे में खड़ाकर दिया है। दहेज, अनमेल, विवाह, पति का संदेह, घर से निकालना और वेश्या की देहरी, विवाह प्रथा और वेश्यावृत्ति का मेलजोल यानी एक होगी तो दूसरी होगी? जिस विवाह का मतलब कन्या विक्रय हो, उससे वेश्यावृत्ति कौन उठा सकता। नारी पराधीनता के बारे में जो अनुभव सुमन को हुआ था, वही अब भोली का भी है। भोली के यहाँ सब कुछ था पर उसके पति की सूरत ही ठीक नहीं थी। छः महीने में ही बाहर निकल पड़ी। प्रेमचन्द की नजर में नारी की पराधीनता और वेश्यावृत्ति हिन्दू, मुसलमान दोनों में थी। तुम्हारे यहाँ नारीत्व का तमी सम्मान किया जाता है जब वह बिकाऊ हो। विक्रय हो फिर भी इस ऐतिहासिक सीमा के बावजूद सेवा सदन का कंधा यथार्थ जीवन से जुड़ता है। सुमन वेश्या–जीवन की प्रतिनिधि पात्र नहीं है। वह वेश्या रहती हैं, लेकिन तन नहीं बेचती। बेचना तो दूर, वह किसी को समर्पित नहीं कर सकती। हिन्दी कथा साहित्य में पहली नारी है जो आत्म रक्षा के लिए संघर्ष की डगर पर पॉव उठाती है। बचपन से ही वह सीधी और निसहाय है। उसकी इच्छाओं को आसानी से कुचल कर उसे एक अवांछित पुरूष के हवाले किया जा सकता है। लेकिन भीतर कहीं वीर नारी का दर्प ही था। वह दर्प जो भारतीय नारी की विशेषता है और ठोकर खाकर जाग उठती है।

उपकल्पना

1. प्रेमचंद सुमन को एक साँचे में ढली हुई सुन्दर मूर्ति की तरह पाठक के सामने नहीं रखते। बल्कि चरित्र के माध्यम से मौलिकता की कल्पना करते है जो शाश्वत मूल्य है।
2. सुमन अपने एक प्रेमी जन की दाढ़ी जला देती है और दूसरे पर वार्निश गिराती है। सोचना पड़ेगा?
3. कहना न होगा– जीवन तो अपने साथ घटे सच को संजोता, अपने आपको रगड़ता, माँजता अनुकूल बनने बनाने की कोशिश करता है। यहीं कल्पना शीर्षक में छिपा है।
4. सुमन की उमर भी भादों की बरसाती नदी की तरह है। सात–आठ महीने ससुराल में रहकर पुरूष की देह का स्वाद चख आयी थी ''देह और अफीम का एक ही किस्सा होता है, जब तक न चखो, तब तक कोई दिक्कत नहीं, लेकिन चख ली तो आदत लगेगी ही लगेगी? यही कारण है कि हुनर के आगे हुश्न को भी मात खाना पड़ता है। (शीर्षक के सम्बन्ध में)

शोध पद्धति

1. मेरे शोध लेख में मनोवैज्ञानिक शोध पद्धति का पुट मिलेगा जैसे– प्रेमचंद नारी को मनुष्य का दर्जा देने के लिए लड़ रहे थे– बत्तीस करोड़ में सोलह करोड़ को जानवर के बदले इंसान समझने के लिए यहीं सुमन का ऐतिहासिक महत्व है।
2. अंग्रेज सरकार के तौर तरीकों और अंग्रेजी हुकूमत के खिलाफ उठने वाली आवाजों तहरीकों ने प्रेचमंद के जेहन में खलबली व बेचैनी मचा रखी थी। शोध पद्धति का सेवासदन में तरजुमा पेश किया है।
3. सुमन या सुमन जैसी हजारो औरतें सिर्फ इस लिए तवायफ बन जाती हैं कि उनके शौहर उनसे प्यार नहीं करते, उन्हें पेटभर रोटी नहीं मिलती, उनकी हसरतों और आरजूओं का खून होता है। विश्लेषणात्मक शोध पद्धति का हवाला है। इस पद्धति के ही आधार पर वह इज्जत व मासूम के घरों को छोड़ कर बेइज्जती व रूसवाई के बालाखानों में पनाह लेती है।
4. सेवा सदन नारी के अघः पतन एवं उत्थान की गाथा है। प्रेमचंद ने कहने का अपना तरीका ईजाद किया है भाषा के अर्थ को वह मुटठी में बंद सिक्के की तरह खोलते हैं। इस उपन्यास में देह अपने पूरे अस्तित्व के साथ उपस्थित है, तथा उसका उपयोग भी उपन्यास की मांग के तहत बड़े सलीके से हुआ है। शोध पद्धति की बात करें तो हस्तक्षेप व्यंजना की एक खास खनक के साथ समय की नजातक को गहरे से चीन्हता है।

साहित्यावलोकन

1918 ई0 का सेवा सदन प्रेमचंद का पहला उपन्यास है। इस उपन्यास ने भारतीय हिन्दी साहित्य की कथा, संस्कृति, समाज, और सभ्यता को बदल दिया। सेवा सदन में यथार्थ है। अनुभूति के स्तर पर ज्यादा है। प्रधानता मध्यवर्ग की है। मध्यवर्ग किस तरह समाज की रूढियों, आडम्बरों जैसे दहेज, अनमेलविवाह, बाल विवाह, वेश्यावृत्त रिश्तों का खोखलापन और सबसे महत्वपूर्ण स्त्री का शोषण पनपता है? इन सारे मुद्दों का समाधान वेश्या पुनरूत्थान का विषय बनाकर हिन्दू और मुसलमानों को एक मत में पिरोना, सेवा सदन की समकालीन उपयोगिता है। सुमन के माध्यम से दहेज और वेश्यावृत्ति की समस्या उपन्यास की बाहरी आवरण है। भीतरी आवरण में झाँकने पर यहॉ स्त्री और पुरूष समस्याओं का पुष्प गुच्छ मिलेगा। रिश्वत, धार्मिक ठगी, राजनीतिक पैतरे बाजी, साम्प्रदायिक विव्देष, मर्यादा और नैतिकता की झूठी शान, वाष्य आडम्बर, चरित भंजन, धर्मजाति के नाम पर जनता को गुमराह करना आदि इस पुष्पगुच्छ की पंखुडियाँ हैं।[1] परत दर पर पंखडियाँ खुलती है। और सेवा सदन पुष्प बन जाता है। वह पुष्प और कुछ नहीं पुनर्जागरण का पुष्प और बीज दोनों बन जाता है। यो कहें पुष्प सुधार का

प्रतीक है, और बीज ''देश प्रेम'' का। यही सेवा सदन का मूल प्रतिपाद्य है। जिसमें विधवा विवाह, वेश्या पुनरूत्थान साथ ही साथ वेश्याओं को समाज की मुख्य धारा से जोड़ना। जो सुधारवादी चेतना है उसी आधार पर हम दावे के साथ कह सकते हैं कि सेवा सदन मुख्य पात्रा सुमन है वह तवायफ नहीं है ? बल्कि औरत है। जहाँ तक देश प्रेम का सवाल है–कुरीतियों को दूर करना था। औरत, औरों के साथ रत नहीं हो सकती। यहाँ भरतीयता की पहचान भी है जबकि उस समय विदेशियों में था। ऐसा मेरा सोचना है।

जाहिर है कि सेवा सदन के मूल में स्त्री को स्वतंत्र करना, पुरूष को सम्मान का दर्जा दिलाना। सेवा सदन में स्त्री अपने स्व व्यक्तित्व में उपस्थित है। पुरूष से विरोध या नकार में नहीं। इसका ज्वलन्त उदाहरण सुमन है। घर देर से आने के कारण सुमन को घर से निकाल देना, मारने के लिए डण्डा लेकर गजाधर का प्रतिक्षा करना तानाशाही पुरूष की प्रवृत्ति को इंगित करता है। इन सब विषम स्थिति के बीच हिन्दी कथा संहित्य की पहली नायिका बनती है, जो स्वावलम्बन पर विचार करती है, और वेश्या–वृत्ति के गर्त से निकलकर स्त्री जीवन की सार्थकता की तलाश करती है।[2] सामाजिक परिवेश में देखा जाय तो स्त्री की स्थिति ठीक नहीं है। वह ज्यादा प्रताड़ित है, पर पुरूष भी कही न कही आहत है। सेवा सदन में यह बात पुरूष विमर्श की नींव है। जैसे–पद्यम सिहं के माध्यम से उजागर होता है–समाज के डर से सुमन को आश्रय न देना, आर्थिक मदद करने के लिए पहले नाम गुप्त रखो की शर्तरखना आदि प्रकरण पुरूष विवशता को प्रदर्शित करता है। प्रेमचंद समकालीन समय की नब्ज को पकड़ते हैं। दरअसल यह एक ऐसा लोक है, जो रूढ़ियों में लिपटे अपने अतीत से टकरा रहा है, और तेज रफ्तार भरी नई पीढ़ी को लेकर भी पेशोपेश में है। स्त्री द्वारा अपनी सहज मानवीय स्वतत्रंता के लिए लड़ाई भी है। जिनमें आशा और विश्वास का प्रस्फुटन हैं, जिनमें आह्लादित करने वाली किरणे भी हैं। जिनमें विचारों की लड़ियाँ हैं। जिनमें मनुष्यता को जीवित रखने वाली तपिश है। जिनमें प्रतिरोध के स्वर हैं। जिनमें जीवन में उम्मीद का अंकुरण है।[3] यही कारण है कि सुमन साधरण स्त्री से एक विशिष्ट औरत बनती है। अपनी जागृत अंतः चेतना की रोशनी में स्त्री–पुरूष असमानता के दुर्ग को ध्वस्त करने की अलख जगाती हुई, वेश्यावृत पर प्रश्न चिन्ह लगाती है। बहुपत्नीत्व को नकार, स्त्री के अस्तित्व की पक्षधरता करती है। जीवन के कई रंगों को समेटती, संघर्षों से लोहा लेती, समस्याओं से उलझती, किन्तु प्रेम, अंतरंगता और उम्मीद के ताजमहल को बदस्तूर कायम रखती है। जीवन की असीम संभावनाओं से लैस सुमन वर्तमान भविष्य की धरोहर है।

असल में सेवा सदन अनेक छोटी–छोटी दास्तानों का गुलदस्ता है। इस उपन्यास में कई रंगों और खुश्बू के फूल हैं, कथानक रूपी गुलदस्ते में इश्क, बेवफाई, धोखा, कारर्पोरेट लाइफ, मिलना, बिछुड़ना, महत्वाकांक्षा, असफलता, शादियाँ और न जाने क्या–क्या है। आप सबको अलग–अलग सूँघें या एक साथ खुशबू देर तक बसी रहे मन में। एक नई दुनियां में खुलने वाले झरोखों की तरह बंद कमरे में खुल उठेगा, ढेर ताजी हवा सूरज की किरणें और उसमें चमकते धूल के कणों के साथ का उपन्यास का परिवेश कामकाजी और महानगरीय है। किन्तु यह संसार भी तो जीवन और लोक का ही अंग है। हम इसे न माने तो यह हमारी अनभिज्ञनता है। आज बंगलौर, चेन्नई, हैदराबाद, दिल्ली, मुम्बई, शहरों में बहुराष्ट्रीय कम्पनियों में कार्य करती हुई नौजवान स्त्रियाँ और जैसा कि युवा वर्ग की सफलता और सुविधा ही उनके जीवन का मूल मंत्र है। कोऊनृपहोय हमें का हानि'' की अवधारणा में विश्वास करता है।[4] सच में सुमन का चरित्र इस उपन्यास की प्रयोगात्मक प्रवृत्ति की एक नजीर भर नहीं है, बल्कि प्रेमचंद ने ऐसे कई अनूठे चरित्रों के पकवानों में जड़ा है। वास्तव में वेश्या जीवन उसका मुख्य विषय है भी नहीं, सुमन कथा पर छाई है। इसलिए सेवा सदन से आभास हो सकता है कि उपन्यास वेश्या जीवन पर है। या और बुरा लेकिन इस बात की पड़ताल किया जाय कि कितने भाग में वेश्या और कितने भाग में जीवन की चर्चा है। पता चलेगा कि एक तिहाई से ज्यादा भाग में चर्चा क्या है।[5] जाहिर है कि प्रेमचंद ने नकली आदर्शों की रामनामी खींचकर पंडितों और मौलवियों, समाज के प्रतिष्ठित सज्जनों और धनपतियों का वास्तविक रूप जनता के सामने प्रकट कर दिया। सुमन सुन्दर सी लड़की है। वह अन्याय के सामने नहीं झुकती है। सम्मान के खिलाफ कोई समझौता नहीं करती। उसके पिता दरोगा थे, अच्छे घर में विवाह हो सकता तो, यह घटना शायद नहीं घटती। न यह उपन्यास ही लिखा जाता। लेकिन इसके मूल में कथा कथित शिक्षित लोग, जिनके लिए मनुष्यता कोई चीज नहीं थी, धन सब कुछ था, कितने निर्दयी, कायर, और झूठे थे, इसकी पोल खोलने के लिए कलात्मक ठंग से लिखा है। उदाहरणार्थ– उमानाथ अपनी बहन को यों समझाते हैं– शहर में कोई बूढ़ा तो होता ही नहीं। जवान लड़के होते हैं और बुढ़े जवान, उनकी जवानी सदाबहार होती है। वहीं हँसी, दिल्लगी, वही तेल फुलेल का शौक। लोग जवान ही रह जाते हैं, और जवान ही मर जाते हैं। सोचनीय बात है कि इस तरह के सदाबहार से सुमन की शादी होती है। माँ रोई थी–, मानों ''किसी ने सुमन को कुएँ में ढकेल दिया हो''। समस्या मुँहबाये खड़ी है। लड़कियों को कुएँ में डलना या ढकेलना फिर सतीत्व और पति धर्म के गीत गाना। समुचे व्यापार में बेचारी सुमन की इच्छा या अनिच्छा का सवाल नहीं उठता। वहीं लोग हैं जो घर की स्त्री को पैर की जूती समझते थे, भोली के तलवे सहलानें में अपने को धन्य मानते थे। कहना न होगा जहाँ स्वामी पुरूष शासक था और स्त्री शासित। इस में स्वामी के सम्बन्ध को ढॅकने के लिए उसने जितने आदर्शों के दुपट्टे ओढ़ रखे थे, प्रेमचंद ने उन्हें खींचकर एक तरफ फेंक दिया। उन्होंने दिखाया कि ये पुरूष स्वामी उसी स्त्री की इज्जत करते है जो किसी एक की दासी नहीं है।

अध्ययन का उद्देश्य

बीसवीं सदी परिवर्तन लेकर आया है। साम्राज्यवादी सांमती जूते के नीचे जनता कसमसाने लगी है। समाज का सबसे दलित अंग नारी– राष्ट्रीय पराधीनता और घरेलू दासता, दोनों से पिसती हुई नारी स्वाधीनता के लिए हाथ फैलाने लगी है। प्रेमचंद ने उसी समय सबसे पहले देखा था। स्वागत किया, उसे बढ़ावा दिया था। सुमन का चरित्र पाठकों को ऊँचा उठाता है, वह उनके मन में एक विश्वास जगाता है। पति पुरानी रीति से घर के बाहर निकलता है, धमकी देता है, चली जा मेरे घर से, रॉड़ कोसती है। सुमन न पैर पकड़ती न गिड़गिड़ाती है। बल्कि उसके स्वर में 'नव जाग्रत' नारीत्व उत्तर देता है– क्या तुम्हीं मेरे अन्नदाता हो? जहाँ मजूरी करूंगी, कही पेट पाल लूँगी। प्रेमचंद दिखलाया है कि ये सदाचारी के आड़ में वेश्यावृत्ति को प्रश्रय ही नहीं देते, वेश्याओं को जन्म देते हैं। कुलीन समुदाय की नारी भी सामाजिक प्रताड़ना और असमानता सहकर कोठे की सीढ़ियाँ चढ़ कर वेश्या बन सकती हैं। जिसका निदान वेश्याओं के सामाजिक सुधाकर में नहीं ब्राम्हणत्व के श्रेष्ठत्व बचाने के विकल्प को उपन्यास में तलाशा गया है। यह उपन्यास समाज की साम्प्रदायिक सोच को बेनकाब करता है। मुंशी प्रेमचंद अपने समय में सेवा सदन के पिटारे से सियासत के नाग निकाले थे। सेवा सदन के पात्रों पर ब्रिटिश सरकार के दोहरे मानदण्डों, एवं अपने पात्रों को शांती की आँखों से देखा था। देशवासी सर पर बड़े–बड़े गठ्ठर लादे एक संकरे द्वार पर खड़े हैं। दूसरे एक चौड़े दरवाजे से अंग्रेज लोग छड़ी घुमाते कुत्तों को लिए आते–जाते हैं। उन्हें कोई नहीं रोकता। न उनसे कोई बोलता। यह सामाजिक यथार्थ प्रेमचंद ने अपनी आंखों से देखा था। प्रश्न है कि क्या आज नहीं है! जवाब है–आज भी तो है। वे हैं जिनमें दया नहीं, निज भाषा से प्रेम नहीं, चरित्र नहीं, आत्मबल नहीं, वे भी क्या कुछ आदमी हैं। इस तरह का प्रभाव सेवासदन में सर्वांगीण रूप में दिखाई पड़ता है। जो कथानक के विकास के साथ पाठक की धमनियों में प्रवेश करता हुआ उसके पूरे अस्तित्व पर छा जाता है। इसकी उपयोगिता को इनकार नहीं किया जा सकता हैं सेवा सदन को मुर्दा दस्तावेज कहा जाता है? ऐसा नहीं है? इस उपन्यास को पढ़ना चाहिए।

निष्कर्ष

हम कह सकते हैं कि सुमन अपने सत्य की रक्षा करती है, नाचती है, गाती है, पर अपने को भ्रष्ट नहीं होने की प्रतिज्ञा करती है। काजल की कोठरी में रहकर भी काजल की कालिमा से अपने को दूर रखती है। क्योंकि उसको पता है–सुख संतोष से प्राप्त होता है, विलास से कभी सुख नहीं मिल सकता। मन में संतोष रखती है, अगर पाने के लिए सेवा की ओर अग्रसारित होती है और सोचती है– यह (दालमण्डी) स्थान दूर से कितना सुहावना, कितना मनोरम, कितना सुखमय दिखाई देता है? मैंने इसे फूलों का बाग समझा, लेकिन है क्या? एक भयंकर वन, मांसाहरी पशुओं और विषैले कीड़ों से भरा हुआ है।[6] इसका जीता जागता उदाहरण सेवा सदन की नायिक सुमन है। सुमन की आन्तिरिक प्रवृत्तियां मरी नहीं, कुम्हलायी नहीं, बल्कि सदा जागृत रहीं। उसका चरित्र कीचड़ मे भी रहकर पवित्र बना रहा। इसी कारण वह माया नगरी दालमण्डी को छोड़कर विधवा आश्रम में आती है– सोये हुए मनुष्य को जगाने की अपेक्षा जागते हुए मनुष्य को जगाना कठिन है सोता हुआ आदमी अपना नाम सुनते ही चौंक कर उठ बैठता है, जागृत हुआ मनुष्य सोचता है कि यह किसकी आवाज है, उसे मुझसे क्या काम है? इससे मेरा काम तो न निकल सकेगा? सचमुच! ऐसा ही चेतना सुमन में जागृत रहीं। वह चाहती तो समाज को ठेंगा दिखा, सुख विलास में ही डूबी रहती। लेकिन नहीं, उसने मजबूरी में अपनायी अपनी वेश्यावृत्ति नाच, गाने की तिलांजलि देकर विधवा आश्रम में अपने ही हाथ से भोजन बनाती थी। पतित होकर भी वह खान–पान में विचार करती थी। रूप लावण्य प्राकृति गुण है। जिसमें कोई परिवर्तन नहीं हो सकता। स्वभाव एक उपार्जित गुण है, उसमें शिक्षा और सत्संग से सुधार हो सकता है। यही सुधार, यही सजग चेतना तो सेवा सदन का प्राण है। वास्तव में हम लोग अपनी कायरता से, लोक निंदा से, प्राण भय से, अपनी बेहयाई से, आत्म गौरव की हीनता से, दुर्बलता से, अन्याय का प्रतिवाद करने का साहस खो बैठते हैं। यहीं बात से विधवा आश्रम छोड़ना पड़ता है। अब दूसरों के लिए जीने का संकल्प लेती है– सिर मुड़ा लेती है, उसका कुन्दन सा दमकता मुख मण्डल, वह चंचल, मुस्कुराती आंखें भला अब कहॉ? वह कोमल, चपलगात, वह दुगुर्ण सा भरा शरीर, वह अरूण वर्ण कपोल– सब लुप्त हो गये। बचा रहा तो सिर्फ वर्णहीन, मुख पर विरक्ति, स्वयं तथा आत्मत्याग की निर्मल शान्तिदायिनी ज्योति शेष दिखाई देती है। इन सबके पीछे सुमन का पतिव्रत है, क्योंकि पतिव्रत नारी जीवन का परम तत्व है, नाच, गाना वह करती जरूर है, पर अपने पति व्रत पर ऑच नहीं आने देती।

सारतः प्रेमचंद युग के प्रगतिशील कदमों की पहचान में कभी भूल नहीं की और उसका कोई भी कदम पीछे की ओर नहीं पड़ा। दहेज प्रथा, बेमेल विवाह, वेश्या समस्या आदि सामाजिक समस्याओं को केन्द्र में रखकर लिखा गया, यह उपन्यास एक अनमोल धरोहर है। क्योंकि हमें उनसे घृणा करने का कोई अधिकार नहीं है, अगर घृणा करते हैं तो अन्याय है। यह हमारी की कुवासनाएँ, हमारे ही समाज की कुप्रथाएँ हैं, जिन्होंने वेश्या का रूप धारण किया है। यह दालमण्डल हमारे ही पैशाचिक अधर्म का साक्षात्कार स्वरूप है। हम किस मुॅह से उन्हें घृणा करें। इस बात को समझने के लिए सात सूत्र हैं– सेवाभाव, संतुलन, संग्राम, समन्वय, सकारात्मक, सद्भावना एवं संवाद। जरूरत है एक–एक सूत्र पर आज के संदर्भ में विचार करने का तभी तवायफ और औरत का भेद समझ में आयेगा अन्यथा अ + मन, या च + मन या सु + मन या ..... सोचने के लिए है।

संदर्भ गंथ सूची

1. *प्रेमचंद पथ–जनवरी–मार्च 2019 पृ0 38–39*
2. *वही पृ0 39.*
3. *शिवना साहित्यिकी जनवरी–मार्च 2019, वर्ष 3 अंक 12, पृ0 25*
4. *लमही जनवरी–मार्च 2019, पृ0 111*
5. *प्रेमचन्द पथ–जनवरी–मार्च 2019, पृ0 16*

6. *सेवासदन–प्रेमचन्द पृ0 83.*